सिंधु सभ्यता की मूर्तिकला

स्नातक तृतीय वर्ष
प्राचीन इतिहास

डॉ. विश्वनाथ वर्मा
एसोसिएट प्रोफेसर एवं अध्यक्ष
प्राचीन इतिहास, पुरातत्त्व एवं संस्कृति विभाग
हरिश्चंद्र स्नातकोत्तर महाविद्यालय वाराणसी (उ.प्र.)
E-mail : drvn.verma@gmail.com
Website : www.worldwidehistory.com

सिंधु सभ्यता की मूर्तिकला

कला के इतिहास में मूर्तिकला का इतिहास पुरातन है। भारत के इतिहास में मूर्तिकला का इतिहास, इतिहास के समान ही प्राचीन है। हमारी सभ्यता के अवशेष सिंधु घाटी में मिले हैं। किंतु आश्चर्य की बात यह है कि सिंधु घाटी की सभ्यता हमारी शैशवकालीन सभ्यता की सूचक होने की अपेक्षा चरमोत्कर्ष की परिचायक है। कला की दृष्टि से यह काल उत्कर्ष का काल था, प्रत्येक कलाकृति में जीवन की सजीवता प्रतिबिंबित है।

भारतीय पुरातत्व के इतिहास में सन् 1921 एवं 1922 ई. का वर्ष चिरस्मरणीय रहेगा क्योंकि 1921 ई. में दयाराम साहनी ने रावी नदी के बांयें तट पर स्थित हड़प्पा के टीलों का अन्वेषण किया और 1922 ई. में राखालदास बनर्जी ने सिंध प्रांत के लरकाना जिले में सिंधु नदी के दाहिने तट पर स्थित मोहनजोदड़ो के टीले को ढँढ़ निकाला। यद्यपि चार्ल्स मैसन पहले व्यक्ति हैं जिन्होंने 1826 ई. में पंजाब के साहीवाल जिले में स्थित एक हड़प्पीय टीले का उल्लेख किया था। परंतु किसी का ध्यान इस ओर नहीं गया। चार्ल्स मैसन ने ''नैरेटिव आफ जर्नीज'' नामक लेख में इसका उल्लेख किया था। उनका मत था कि 325 ई.पू. में सिकंदर और पोरस के बीच यहीं पर युद्ध हुआ था।

1946 ई. में सर मार्टीमर ह्वीलर ने हड़प्पा पुरास्थल का पुन: विधिवत उत्खनन कराया। इस उत्खनन से पता चला कि वहाँ तीन सहस्र वर्ष ईसापूर्व में विकसित एक सभ्यता अस्तित्व में आ गई थी। प्रारंभ में चूँकि सैंधव सभ्यता का प्रादुर्भाव हड़प्पा नामक पुरास्थल पर हुआ था, इसलिए इसे 'हड़प्पा सभ्यता' या 'हड़प्पा संस्कति' के नाम से विख्यात हुई। जान मार्शल महोदय ने सर्वप्रथम इस संस्कति को सैंधव सभ्यता कहकर पुकारा, क्योंकि प्रारंभ में इस संस्कृति के स्थल सिंधु एवं उसकी सहायक नदियों के किनारे मिले हैं।

हड़प्पा सभ्यता को कांस्ययुगीन सभ्यता भी कहते हैं, क्योंकि काँसा (तांबा और टिन का मिश्रण) का सबसे पहली बार प्रयोग इसी समय हुआ। गार्डेन चाइल्ड महोदय ने सिंधु सभ्यता को ''प्रथम नगरीय क्रांति'' कहा है। कुछ विद्वान् हड़प्पा को 'हरियूपिया' मानते हैं जिसका उल्लेख ऋग्वेद में मिलता है।

प्राचीन भारतीय कलाओं में मूर्तिकला सर्वाधिक लोकप्रिय थी। यह मानव जीवन के अभिन्न अंग के रूप में लौकिक परंपराओं में व्याप्त थी। भारतीय जीवन के विभिन्न आदर्शों की प्रगति ही मूर्तिकला का उद्देश्य रहा है। 'कला कला के लिए' का सिद्धांत मूर्तिकला में विरले ही प्रयुक्त है। इसमें तो हमारी धार्मिक, दार्शनिक एवं सांस्कृतिक परंपराएँ समाहित हैं। धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्ष का संवर्द्धन ही भारतीय मूर्तिकला का आदर्श है। मूर्तिकला लौकिक आदर्शों का अनुगमन करती हुई सौंदर्यानुभूति में भी पूर्ण सक्षम है। यह मानव के सर्वांगीण विकास पर बल देती है। कभी-कभी यह मत व्यक्त किया जाता है कि मूर्तिकला धर्म प्रधान है।

यह सत्य है कि विश्व की समस्त कलायें धार्मिक परिधान में प्रस्फुटित हुई किंतु भारतीय मूर्तिकला मानव के नि:श्रेयस सिद्धि के साथ जीवन के भौतिक पक्षों की उपेक्षा नहीं करती है। मूर्तिकलाकार ने प्रकृति के विभिन्न अंगों को आदर्श रूप में प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। उसकी अभिव्यक्ति में कलाकार की अनुभूति का दर्शन होता है। भारतीय मूर्तिकला विचार या भाव प्रधान मानी गई है। यह भावों को व्यक्त करने की अपेक्षा उसकी ओर संकेत अधिक करती है।

सैंधव सभ्यता में कला के विभिन्न रूपों का भी सम्यक् विकास हुआ था। हड़प्पाई कला के विविध पक्षों का विकसित रूप इस सभ्यता के विभिन्न स्थलों से पाये गये नगरों, भवनों के अलावा मूर्तियों, मुहरों, मनकों, मृद्भांडों आदि के निर्माण एवं उन पर उत्कीर्ण चित्रों में परिलक्षित होता है। सौंदर्य और तकनीक की दृष्टि से हड़प्पाई कला का भारतीय कला के क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण योगदान है। सिंधु सभ्यता की मूर्तिकला की विवेचना हेतु इन्हें तीन वर्गों में विभाजित किया जा सकता है-

1. प्रस्तर मूर्तियाँ
2. धातु मूर्तियाँ
3. मृण्मूर्तियाँ

इसी श्रृंखला में कला की महत्ता की दृष्टि से सैंधव सभ्यता के पुरास्थलों से प्राप्त मुहरें, मनके तथा मृद्‌भांड एवं आभूषण आदि का अध्ययन भी आवश्यक प्रतीत होता है। ये कलाएँ सिंधु सभ्यता के लोगों की सुरूचि की परिचायिका हैं। सिंधु सभ्यता की प्रस्तर तथा धातु की उत्कृष्ट मूर्तियाँ तत्कालीन तकनीकी प्रगति की परिचायिका हैं। मृण्मूर्तियों एवं विस्मयकारी मुहरों का निर्माण अत्यंत कुशलता के साथ किया गया है।

प्रस्तर मूर्तियाँ

सैंधव पुरास्थलों से प्राप्त पुरावशेषों से मृण्मयी मूर्तियों की तुलना में प्रस्तर निर्मित मूर्तियाँ कम ही प्राप्त हुई हैं। इन मूर्तियों के निर्माण में अलबस्टर, सेलखड़ी, चूना-पत्थर, बलुआ-पत्थर, स्लेटी-पत्थर आदि का उपयोग किया गया है, जिसमें से बारह मूर्तियाँ मोहनजोदड़ो से और तीन मूर्तियाँ हड़प्पा से प्राप्त हुई हैं। मोहनजोदड़ों से प्राप्त बारह प्रस्तर मूर्तियों में पाँच गढ़ीवाले टीले के एच. आर. क्षेत्र से प्राप्त हुई हैं। जिससे उस क्षेत्र का विशिष्ट महत्व इंगित होता है। इनमें से अधिकांश मूतियाँ खंडित हैं एवं आकार में भी अपेक्षाकृत छोटी हैं। इन मूर्तियों में कतिपय विशेष उल्लेखनीय हैं। इन मूर्तियों में सेलखड़ी की बनी लगभग 19 सेमी लंबी खंडित 'पुरुष मूर्ति' है। जिसमें कायभाग के साथ मस्तक भी सुरक्षित है परंतु हाथ टूटे हैं। जिसका सिर से वक्षस्थल तक का भाग सुरक्षित है। मूर्ति के नीचे का भाग खंडित है एवं इसके नेत्र लंबे तथा अधखुले हैं। दृष्टि नासाग्र पर केंद्रित है। माथा ढलुवा एवं छोटा है, होठ तथा गर्दन सामान्य से कुछ अधिक मोटी है।

संभवत: मेसोपोटामिया-सभ्यता की कलाकृतियों में भी मोटी गर्दन बनाने का प्रचलन था। जान मार्शल महोदय ने यह मत व्यक्त किया है कि अपनी विशेषताओं से यह प्रस्तर-मूर्ति किसी व्यक्ति विशेष की रूपाकृति प्रतीत नहीं होती और न ही वहाँ बसे किसी जाति विशेष का द्योतक माना जा समता है। परंतु इसके विपरीत मैके महोदय इस आकृति को पुजारी तथा आर. पी. चंद्रा महोदय 'योगी' का बताते हैं।

बेबीलोन-सभ्यता में योगी या पुरोहित 'तीन-पतिया अलंकरण' के वस्त्र धारण करते थे। आदि पुराण में भी उल्लेख मिलता है कि, ''नात्युन्मिषम् न चात्यंतनिमिषम'' अर्थात् योगी की आँखें न तो पूरी बंद होनी चाहिए और न पूरी खुली। इस प्रस्तर की आकृतिवाले पुरुष के नेत्रों की स्थिति ठीक ऐसी ही है। इसलिए आर.पी. चंद्रा इसे योगी की मूर्ति मानते हैं। इसकी दाढी विशेष रूप से सँवारी हुई है, दाढ़ी के बाल पत्थर में लकीर काटकर बनाये गये हैं तथा मूँछें साफ हैं। इसका केश-विन्यास अत्यन्त रोचक है।

संभवत: प्राचीन मेसोपोटामिया की कलाकृतियों की भाँति इस प्रस्तर मूर्ति में भी मूँछ मुड़ी हुई प्रदर्शित की गई है। केश-पाश पीछे की ओर सँवारकर एक फीते से बाँधे हुए हैं। नेत्रों में जड़ाऊ काम का स्पष्ट संकेत है। कान छोटे एवं गोल हैं। शाल से बायाँ कंधा ढँका है एवं दाहिना कंधा खुला है। जिसमें तिनफुलिया या तिनपतिया अलंकरण बना है। दाहिनी भुजा में जो भुजबंध है उसमें एक अलंकारिक वृत्त बना हुआ है।

शिल्प की दृष्टि से इस मूर्ति का गठन बहुत आकर्षक एवं प्रभावशाली नहीं है। इसका केश-विन्यास विशेष रूप से मोहक है, जिसे कलाकार ने पीछे से काढ़कर फीते से बँधा हुआ प्रदशित किया है। संभवत: इस मूर्ति पर किसी प्रकार का लेप लगाया गया था। मूर्ति के सजे-सँवरे बाल, दाढ़ी युक्त चेहरा, अर्द्धनिमीलित आँखें और तिफुलिया अलंकृत-वस्त्र सैंधव सभ्यता की सामान्य मूर्तियों से इसे अलग रूप में प्रस्तुत करते हैं।

मोहनजोदड़ों से अगभग 17.8 सेमी लंबा चूना पत्थर पर बना हुआ पुरुष का एक अन्य सिर भी मिला है। जिसके छोटे-छोटे बाल को पीछे की ओर केशबंध से बाँधा गया है। यद्यपि यह मूर्ति भी दाढ़ीयुक्त एवं मूँछें साफ किये हुए बनाई गई है। तथापि इसमें पहली मूर्ति जैसी कारीगरी का अभाव है। अलबेस्टर की बनी हुई 29 सेमी ऊँची बैठे हुए व्यक्ति की जो मूर्ति मिली है उसे कमर में 'पारदर्शी वस्त्र' पहने हुए दिखाया गया है। बायाँ घुटना ऊपर उठा हुआ दिखलाया गया है, जिस पर बायाँ हाथ रखा हुआ है। इसका सिर खंडित है। चेहरा तथा नाक आवश्यकता से अधिक लंबा दिखाया गया है, चेहरे पर नुकीली दाढ़ी भी है।

इन मूर्तियों के अतिरिक्त मोहनजोदड़ो से स्त्रियों के कुछ सुंदर सिर भी प्राप्त हुए हैं। एक लगभग 5.5 इंच ऊँचे सिर में घुँघराले बाल दिखाये गये हैं। मोहनजोदड़ो से मानव मूर्तियों के अतिरिक्त पत्थर की बनी हुई कतिपय पशु-मूर्तियाँ भी मिली हैं। चूना-पत्थर की बनी एच.आर. क्षेत्र से प्राप्त भेड़ा की मूर्ति लगभग 12 सेमी ऊँची है। कलात्मक दृष्टि से उल्लेखनीय वह मूर्ति है जो भेड़ा और हाथी की संयुक्त मूर्ति है। चूना पत्थर की यह मूर्ति लगभग 25 सेमी ऊँची है। शरीर और सींग भेड़ा का और सूँड़ हाथी का है। यह मूर्ति डी.के. क्षेत्र से प्राप्त हुई थी। इससे मिलती-जुलती संयुक्त आकृतियाँ मुहरों पर प्राप्त होती हैं।

हड़प्पा से प्राप्त प्रस्तर मूर्ति

हड़प्पा के उत्खनन से तीन उच्चकोटि की प्रस्तर मूर्तियाँ मिली हैं। ये तकनीक की दृष्टि से सिंधु सभ्यता की मूर्ति-परंपरा से नितांत भिन्न है। इनमें से एक लाल तथा दूसरी स्लेटी रंग के पत्थर पर निर्मित है। दोनों ही मूर्तियों में मस्तक और पैर टूट गये हैं। लाल प्रस्तर मूर्ति में शरीर का गठन बड़े ही सुंदर और स्वाभाविक रूप से प्रदर्शित किया गया है। मूर्ति पूर्णत: नग्न है। मूर्ति का उदर भाग ठीक वैसे ही ऊपर उठा हुआ है जैसा कि ऐतिहासिक युग की मूर्तियों में देखने को मिलता है। मूर्ति के दोनों कुहनी पर और गले में छिद्र बने हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि उस युग में सिर और अन्य अंगों को अलग-अलग निर्मित करने की प्रथा थी और इस मूर्ति में भी हाथ और सिर को अलग से निर्मित कर किसी मसाले द्वारा उन छिद्रों में जड़ा गया होगा। शिल्प की दृष्टि से उत्कृष्ट इस मूर्ति का निर्माण एक संतुलित अनुपात में किया गया है। इस मूर्ति में अद्भुत मांसलता है। मूर्ति खड़ी हुई मुद्रा में है। उसके पीन स्कंधों तथा संतुलित नितंबों की रेखाओं से मूर्तिकला की विकसित अवस्था का ज्ञान प्राप्त होता है। यद्यपि उत्खनन में वत्स महोदय को इसकी धड़ और भुजाएँ नहीं मिली थी।

दूसरी मूर्ति जो स्लेटी रंग की है, का बायाँ पैर कुछ ऊपर उठा हुआ है और दीहिना पैर भूमि पर टिका है। कमर के ऊपर का भाग बांई ओर को घूमा हुआ है। दोनों हाथ भी नृत्य की मुद्रा में फैले हुए हैं। डा. वासुदेवशरण अग्रवाल महोदय ने इस मूर्ति के विभिन्न लक्षणों के आधार पर इसे नारी मूर्ति माना है। उनके अनुसार शरीर के विभिन्न अंगों का निम्नोन्त विभाग या उतार-चढ़ाव का बँटवारा और भारी नितंब भाग से स्पष्ट है कि यह स्त्री मूर्ति थी। समस्त शरीर का संतुलन दाहिने पैर पर है और बाँया पैर नृत्य-मुद्रा में दाहिनी ओर लयात्मक या तालात्मक प्रक्षेप में है,जिससे स्पष्ट है कि यह अवश्य ही मानवीय या दिव्य नर्तकी मुर्ति होगी।

हड़प्पा से प्राप्त ये दोनों कबंध मूतियाँ सैंधव-सभ्यता की विशिष्ट मूर्तियाँ हैं। इन मूर्तियों की सुंदरता को देखकर ज्ञात होता है कि उस काल के लोग तक्षण कला में कितने निपुण थे। यहीं नहीं उन्हें मानव शरीर के विभिन्न अंगों के गठन का भी पूरा-पूरा ज्ञान था, मूर्तियों में सौंदर्य-सौष्ठव के तत्वों की प्रधानता है। लाल पत्थर से निर्मित मानव मूर्ति को तो देखकर वत्स महोदय को भी इसके कुषाणकालीन होने का भ्रम हो गया था, किंतु इस मूर्ति प्राप्ति तीसरे स्तर सतह से काफी नीचे है।

प्राय: भारतीय कला में यथार्थता की उपेक्षा की बात कही जाती रही है और यथार्थ रूपांकन का श्रेय ग्रीक कलाकारों को दिया जाता है। ग्रीक मूर्तिकार मानव मूर्ति को स्वस्थ और निर्दोष शरीर के आधार पर गढ़ते थे। इस प्रयास में स्वाभाविकता का जितना अधिक सहारा लिया जाता था, कृति उतनी ही अधिक उत्कृष्ट समझी जाती थी। शरीर-रचना विज्ञान पर पूरा ध्यान दिया जाता था। हड़प्पा की दोनों ही कबंध मूर्तियों में शारीरिक सौंदर्य की अनुपम अभिव्यक्ति हुई है। लाल पत्थर की मूर्ति में स्वस्थ और पुष्ट मानव शरीर का यथार्थ स्वरूप प्रतिबिम्बित हुआ है, अंग-प्रत्यंगों की समविभक्तता इस रूप में नियोजित है कि पाषाण की कठोरता समाप्त हो गयी है। मार्शल महोदय के अनुसार ई.पू. चौथी शती में कोई भी यूनानी कलाकार इन मूर्तियों को स्वनिर्मित कहने में गौरव समझता।

मोहनजोदड़ो एवं हड़प्पा से प्राप्त पाषाण मूर्तियों की संरचना तथा शिल्प की दृष्टि से तुलनात्मक विवेचन करने पर स्पष्ट होता है कि मोहनजोदड़ो की पाषाण मूर्तियों में हड़प्पा की मूर्तियों के अनुपात और सौंदर्य का अभाव है। मोहनजोदड़ो के कलाकार मानवीय स्वरूप तथा विभिन्न अंगों को यथार्थ रूप में दिखाने में सफल नहीं हुए हैं। उदाहरणार्थ तिपतिया योगी मूर्ति के कान को इतना अधिक पारम्परिक शैली में प्रदर्शित कर दिया गया है कि सिर से अलग कर मानवीय कान के रूप में उसका अभिज्ञान करना सरल नहीं है। मोहनजोदड़ो की मानव मूर्तियों में शिल्पगत त्रुटियाँ भी दृष्टिगत होती हैं। हड़प्पा से प्राप्त पाषाण मूर्तियों के निर्माण में यथार्थ रूपांकन रूष्ट होता है।

धातु की मूर्तियाँ

सिंधु सभ्यता के अनुशीलन से यह स्पष्ट होता हे कि तत्कालीन कलाकार 'धातुविद' भी थे क्योंकि वे धातु से निर्मित होनेवाली मूर्तिकलाओं की विभिन्न निर्माण-पद्धति से पूर्ण परिचित थे। सिंधु घाटी का मूर्तिकार धातु-अयस्कों को पिघलाने और दो धातुओं के मिश्रण से मिश्रित धातु बनाने की कला में पारंगत था। धातु की बनी मूर्तियाँ और मुहरें इसके प्रमाण हैं। मोहनजोदड़ो, चान्हुदड़ों, लोथल एवं कालीबंगाँ से कांस्य धातु की मूर्तियाँ अभी तक मिली हैं।

हड़प्पा संस्कृति में मोहनजोदड़ो के एच.आर. क्षेत्र से प्राप्त 14 सेमी ऊँची कांस्य निर्मित नर्तकी की मूर्ति कला की दृष्टि से सर्वाधिक कलात्मक मानी जाती है। इस मूर्ति के पैरों के नीचे का भाग टूटा है। यह मूर्ति नग्न है। नर्तकी के हाथ एवं पैर लम्बे हैं, दाहिनी भुजा जिसमें बाजूबंद और कलाई में थोड़ी सी चूड़ियाँ हैं, कमर पर अवलम्बित है। बाईं भुजा जो कंधे से लेकर कलाई तक चूड़ियों से भरी है, के हाथ में एक पात्र है। मूर्ति की आँखें बड़ी किंतु अर्द्धनिमीलित प्रतीत होती है। उसके बाल अति कलात्मक ढ़ंग से सँवारे गये हैं। कंठ कंठाभरण से अलंकृत है। जिस पर तीन लटकनें हैं। उसके पैरों और भुजाओं के एक साथ सूक्ष्म ताल से यह ज्ञात होता है कि यह नृत्य में रत किसी नर्तकी की मूर्ति है। सिर थोड़ा-सा एक ओर झुका है तथा केश-पाश पीछे की तरफ एक वेणी में सँवारकर दाहिने कंधे पर लटकती छोड़ दी गई है। दुबली-पतली गात-यष्टि तथा क्षीण-कटि की मुद्रा, यह संकेत करती है कि यह नृत्य कला में अभ्यस्त किसी नर्तकी की मूर्ति है। इसकी शारीरिक गठन तथा अंग-सैष्ठव के आधार पर जान मार्शल महोदय का विचार है कि इस मूर्ति के द्वारा किसी आदिवासी नारी के यथार्थ रूपांकन का प्रयास किया गया है।

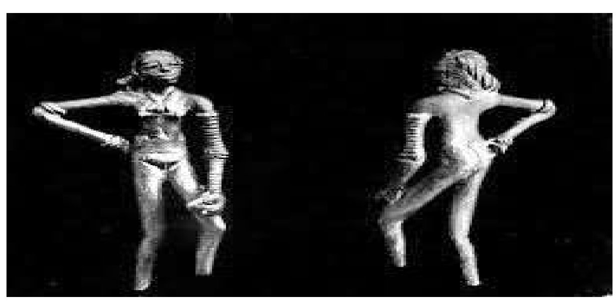

स्टुअर्ट पिग्गट के अनुसार इस नर्तकी-मूर्ति की मुखाकृति कुल्ली (बलूचिस्तान) से प्राप्त नारी मृण्मूर्तियों से बहुत कुछ मिलती है। वास्तव में इस कांस्य-मूर्ति की कलात्मक सुगढ़ता प्राचीन समस्त कलात्मक जगत में अनूठी एवं अतुलनीय मानी गई है। पुरातत्ववेत्ताओं ने इस आकति को नर्तकी की संज्ञा प्रदान की है जो इसकी भाव-भंगिमा, अंगों के अभिराम, शरीर का लचीलापन आदि विशेषताओं को दृष्टिगत रखते हुए 'नर्तकी की अनुकृति' स्वीकार करना प्रासंगिक लगता है।

मोहनजोदड़ो कें एच.आर. क्षेत्र से प्राप्त उपरोक्त नर्तकी मूर्ति के अतिरिक्त दो कांस्य मूर्तियाँ और मिली हैं। इनमें भी आकृतियाँ नृत्य की मुद्रा में ही हैं, किंतु शिल्प की दृष्टि से बहुत अच्छी नहीं हैं। एक आकृति तो संभवत: किसी पीठिका पर थी। धातु निर्मित मानव मूर्तियों के अतिरिक्त कुछ पशु मूर्तियाँ भी मिली हैं जिनमें भेड़, वृषभ, भैंसे, कुत्ते, खरगोश आदि की मूर्तियाँ उल्लेखनीय हैं। इन धातु निर्मित पशु मूतियों में पशुओं की स्वाभाविक विशेषताओं का उत्तम अंकन हुआ है।

मोहनजोदड़ो से ताम्र से निर्मित एक अलौकिक कूबड़दार बैल का नमूना मिला है, जिसका मुँह नीचे की और झुका है और कान तथा सींग किसी कपड़े से बँधा प्रतीत होता है। पशु एक समूचे धातु के टुकड़े से काटकर बना है। इस मूर्ति में उसके मांसल शरीर, तनी हुई भृकुटी और ठूसा मारने की मुद्रा में सींग के प्रदर्शन के माध्यम से वृषभ शक्ति का स्वाभाविक अंकन है। क्रोध में तिरछे देखते हुए भैंसे की आकृति कला का सुंदर उदाहरण प्रस्तुत करती है। लोथल के उत्खनन के फलस्वरूप खरगोश, कुत्ते, आदि की ताम्र निर्मित मूर्तियाँ भी प्राप्त हुई हैं जिसमें पशुओं की स्वाभावगत चेष्टाओं का उत्तम निर्वाह किया गया है। इसी प्रकार कालीबंगा से प्राप्त 'ताम्रवृषभ मूर्ति' कलात्मक दष्टि से अद्वितीय मानी जा सकती है। इस प्रकार 'धातु मूर्तियाँ न केवल सैंधव-सभ्यता की उच्चकोटि की कला का प्रदर्शन करती हैं अपितु कलाकारों की तकनीकी ज्ञान के वैशिष्टय का भी बोध कराती हैं।

मृण्मूर्तियाँ

कला के इतिहास के अनुशीलन से यह स्पष्टतया ज्ञात होता है कि विश्व की सभी प्राचीन संस्कृतियों में मृण्मूति-कला सर्वाधिक लोकप्रिय रही है। संभवत: यही कारण है कि सैंधव पुरास्थलों से प्राप्त शिल्प आकृतियों में मृण्मूर्तियाँ अधिक संख्या में मिली हैं। हड़प्पा की मृण्मूर्तियाँ वहाँ के सामान्य जन की अभिरूचियों को प्रतिबिंबित करती हैं। मिट्टी की बनी स्त्री, पुरुष, पशु तथा पक्षियों की मूर्तियाँ कला के विकास को व्यक्त करती हैं। अधिकांश मृण्मूतियों को हाथ से बनाया गया है, कुछ मूर्तियों को साँचे में ढालकर बनाया गया है। इनमें मानव मूर्तियाँ ठोस हैं जबकि पशु-पक्षियों की मूर्तियाँ प्राय: खोखली हैं। मृण्मूतियों के कलात्मक विश्लेषण एवं अध्ययन के लिए इन्हें तीन वर्गों में वर्गीकृत किया जा सकता है-

1. पुरुष मृण्मूतियाँ
2. नारी मृण्मूर्तियाँ
3. पशु-पक्षियों की मृण्मूर्तियाँ

पुरुष मृण्मूर्तियाँ

सैंधव पुरास्थलों के उत्खनन से प्राप्त मिट्टी की बनी हुई मानव मूर्तियाँ अपनी लंबी नाक, ढलुआ सिर एवं ऊपर से चिकाये हुए मुख के कारण शिल्प की दृष्टि से बहुत उत्कृष्ट नहीं लगती हैं। कुछ मूतियों के सिर पर सींग भी प्रदर्शित किया गया है और साथ ही साथ सींगदार मुखौटे भी मिले हैं जो पीछे की ओर खोखले हैं और उनके किनारे पर छेद बना हुआ है। सैंधव मूर्तियों के निर्माण में साँचे का प्रयोग बहुत ही कम किया गया है।

सैंधव पुरास्थलों के उत्खनन से प्राप्त अवशेषों से मानव मृण्मूर्तियों के उदाहरण कम संख्या में मिले हैं। कतिपय अपवादों को छोड़कर अधिकांश मृण्मूतियों को नग्न रूप में प्रदर्शित किया गया है। पुरुष आकृतियों में कुछ खड़ी एवं कुछ बैठी हुई प्रदर्शित की गई है। बैठी हुई मानव मूर्तियाँ अपनी भुजाओं के द्वारा घुटनों को घेरे हुए अथवा हाथ जोड़े हुए मुद्रा में प्रदर्शित किया गया है। उनका सिर भी नग्न है। मोहनजोदड़ो

और चान्हुदड़ों से प्राप्त कुछ मानव आकृतियों के गले में एक धागा-सा दिखाई पड़ता है। संभवतः ताबीज आदि पहनने के लिए धागा धारण किया जाता रहा हो। मोहनजोदड़ो से प्राप्त एक मृण्मूर्ति में ठप्पें से निकाले हुए दो सिर जोड़े गये हैं। दोनों ही सिरों की मुखाकृति समान है। इस द्विभुज मूर्ति के गले से नीचे का भाग खंडित हो गया है। ऐसा प्रतीत होता है कि इस मूर्ति के द्वारा किसी विशिष्ट देवता का अंकन अभीष्ट था। संभवतः अर्द्धनारीश्वर की कल्पना को मूर्त रूप देने का प्रयास किया गया हो। मेसोपोटामियाँ और मिस्र से भी दो मुखोंवाले देवताओं की मूर्तियाँ मिली हैं। यद्यपि यह द्विमुख देवता कौन है इसे बताना कठिन है। सींग धारण किये हुए मानव की कुछ मृण्मूर्तियाँ मोहनजोदड़ो एवं हड़प्पा के उत्खनन से प्राप्त हुई हैं। एक उदाहरण में तो जिसके सिर पर केवल एक ही सींग रह रह गया है, के गले में कालर जैसी वस्तु को दिखाया गया है। एक अन्य मृण्मूर्ति में सिर के ऊपर प्रदर्शित दोनों सींगों के अग्रभाग टूटे हैं। साँचे में ढालकर निर्मित कुछ सींगधारी मुखौटे भी मिले हैं जो पीछे की ओर खोखले हैं और उनके एक किनारे पर छेद बना है। ऐसा लगता है कि ये मुखौटे लकड़ी या अन्य किसी वस्तु पर लगाये जाते रहे होंगे। इस बात की भी संभावना है कि अपशकुन के भय से दरवाजों के ऊपर इन मुखौटों को लगाया जाता हो या जानवरों से खेतों की रक्षा के लिए इसे लगाया जाता रहा हो। संभवतः धार्मिक अवसरों पर इनका प्रयोग किया जाता था।

मोहनजादड़ो से प्राप्त मिट्टी की दो पुरुष आकृतियों को विद्वानों ने नर्तकों की मूर्तियाँ स्वीकार की हैं। इनके पैरों के घुमाव से पता चलता है कि वे नृत्य की मुद्रा में हैं। ऐसा नृत्य संभवतः किसी विशेष संप्रदाय के लोगों के मध्य प्रचलित रहा होगा। यह भी संभव है कि किसी विशेष उत्सव के अवसर पर पुरुषों द्वारा नृत्य किया जाता रहा हो। सैंधव पुरास्थलों से प्राप्त कुछ मिट्टी की मुहरों पर भी नृत्य के दृश्य दिखाये गये हैं। एक मुहर वर मनुष्यों को सामूहिक रूप में नृत्य करते हुए और एक व्यक्ति को ढोल बजाते हुए दिखाया गया है। संभवतः यह किसी देवी या देवता को खुश करने अथवा किसी विशेष उत्सव या धार्मिक आयोजन के लिए किया गया हो।

हड़प्पा के उत्खनन के परिणाम स्वरूप एम. एस वत्स महोदय को एक पुरुष मृण्मूर्ति का दाहिना भाग खंडित अवस्था में मिला है। इस मूर्ति की विशेषता यह है कि अन्य मृण्मूर्तियों के समान इसे नग्न न दिखाकर उसे फुल्लों से चित्रित वस्त्र धारण किये हुए प्रदर्शित किया गया है। मूर्ति के नाक में काफी उभार है, आँखें लंबी और माथा ढलुआँ है। उसके गले में चार लड़ियों से युक्त हार पड़ा हुआ है। जिससे स्पष्ट है कि नारियों की तरह पुरुष भी आभूषण धारण करते थे। मोहनजोदड़ो तथा हड़प्पा से प्राप्त कुछ पुरुष मूर्तियों की ठुढ़्ढियों पर दाढ़ी के बाल भी प्रदर्शित किये गये हैं। इसी क्रम में लोथल के उत्खन से दो महत्वपूर्ण पुरूष आकृतियाँ प्राप्त हुई हैं। एक की दाढ़ी वर्गाकार कटी है तथा नाक तीखी है।

नारी-मृण्मूर्तियाँ

सैंधव पुरास्थलों से प्राप्त मृण्मूर्तियाँ पुरुष मूर्तियों की अपेक्षा अधिक प्रभावशाली हैं। इनकी मुख्य विशेषता यह है कि ये आभूषणों से सुसज्जित हैं। नारी मृण्मूर्तियाँ हड़प्पा, मोहनजोदड़ो, चान्हुदड़ो आदि से मिली हैं। हरियाणा के बणावली के अपवाद को छोड़कर जहाँ से मिट्टी की दो मूर्तियाँ मिली है, भारत गणराज्य के किसी सैंधव पुरास्थल से स्त्री-मृण्मूर्तियाँ अभी तक नहीं मिली है।

नारी मृण्मूर्तियों का निर्माण विभिन्न शैलियों में किया गया है। अधिकतर नारी-मृण्मूर्तियों के सिर पर पंखे के आकार की किसी वस्तु को दिखाया गया है। आँख एवं वक्ष मिट्टी के गोल टुकड़ों से और आभूषण तथा मेखला को अलग से चिपकाकर बनाया गया है। नाक को प्रायः चुटकी से दबाकर बनाया गया है। मूर्तियों में कमर के ऊपर एक छोटा पटका दिखाया गया है। अधिकांश मूर्तियों के हाथ खंडित हैं, पैर सीधे हैं। घुटनों के नीचे ये प्रायः नग्न हैं। हाथ से बनी इन मृण्मूर्तियों के रूपों में विविधता पाई जाती है। इनके अंग-प्रत्यंग, आभूषण आदि गीली मिट्टी से हाथ से बनाये गये हैं। चुटकी से दबाकर नाक का निर्माण किया गया है, तृण से चीर कर आँखें तथा मुख बनाये गये है।। कभी-कभी अलग से मिट्टी चिपका कर आँखें बनाई

गयी हैं। आभूषण अलग से मिट्टी चिपका कर बनाये गये हैं। गले के कंठहार, कानों के झुमके, कमर की करधनी आदि अलग से मिट्टी चिपका कर बनाई गयी है।

पंखे के आकार की शिरोवेशभूषा विशेष रूप से दर्शनीय है। कुछ मूर्तियों में सिर पर पगड़ी बँधी हुई है। शिरोवेशभूषा के दोनों ओर प्याले जैसी वस्तुएँ दिखाई गई हैं। इन प्यालों के भीतरी भाग में काले रंग के कुछ चिन्ह हैं। ऐसा लगता है कि इनके अंदर धूप-बत्ती आदि रखा जाता रहा होगा। चान्हुदड़ो से प्राप्त अधि िकांश मृण्मूर्तियाँ पगड़ी धारण किये हैं। जिसके गले में कंठहार है, आँखें गोल-पट्टियों द्वारा द्धजिसके मध्य में छेद है।ऋ दर्शाई गई है। कुछ मूर्तियों में स्त्रियों के पेट फूले हुए हैं जो संभवत: गर्भवती होने का संकेत देते हैं।

मातृदेवी की मृण्मूर्तियाँ

मोहनजोदड़ो, हड़प्पा, चान्हुदड़ो तथा अन्य पुरास्थलों से मिट्टी की बनी हुई कुछ विशिष्ट नारी मूर्तियों को पुरातत्वविदों ने मातृ देवी की मूर्तियाँ मानते हैं। ये मूर्तियाँ प्राय: अपने अधोभाग में एक पटका, जो कि एक मेखला से बँधा हुआ है, को धारण किये हुए हैं। पैर सीधे तने हुए हैं, लेकिन पैर की उँगुलियाँ नहीं प्रदर्शित की गयी है। गले में कई लड़ियों का हार हैं और आँखें मिट्टी की गोल बत्तियाँ बनाकर पिरोई गई हैं, सिर पर पंखें के समान एक ऊँची शिरोभूषा है, जो किसी नारे से थमी हुई लगती है। कुछ मूर्तियों में कानों के स्थान पर प्याले के समान वस्तु प्रदर्शित किया गया है। ऐसी मूर्तियों के गले में गुलूबंद जैसा आभूषण भी पड़ा है।

डा. वासुदेवशरण अग्रवाल के अनुसार नारी मृण्मूर्तियों के सिर पर पंखे के समान निर्मित आभरण ऋग्वेद में वर्णित 'ओपेश' लगता है। मोहनजोदड़ो से प्राप्त एक नारी मृण्मूर्ति के बाल पटियादार हैं तथा उसके कानों में झुमके, बाहुओं में भुजबंध, गले में कंठा और वक्ष पर लटकते हुए छोटे-बड़े हार प्रदर्शित किये गये हैं। मूर्ति के जंघे के नीचे का भाग खंडित हो गया है। आँखों में मिट्टी की गोल बत्तियों की पुतरियाँ प्रदर्शित हैं। इस मूर्ति की नासिका लंबी होने के साथ ही साथ ढलुए माथे के सीध में दिखायी गयी है।। यह मूर्ति सौन्दर्य का एक उत्कृष्ट उदाहरण है। डा. अग्रवाल महोदय का मत है कि इस मूर्ति के द्वारा किसी देवी को कला में मूर्त रूप देने का प्रयास प्रतीत होता है।

एक दूसरी मूर्ति जिसकी एक भुजा खंडित है, में इसी प्रकार का अलंकरण दिखाया गया है। उसके मस्तक पर ऊपर उठे हुए पंखे के समान उष्णीष का अंकन हुआ है। सैंधव-सभ्यता के से प्राप्त नारी आकृतियों के कटि-प्रदेश (कमर) के पास कहीं-कहीं एक बच्चा भी दर्शाया गया है। जिससे उसका मातृत्व सूचित होता है। मातृ-मूर्तियाँ अधिकतर वस्त्रहीन हैं परंतु कतिपय आकृतियों के अधोभाग पर 'लहंगे' जैसा वस्त्र है जो चुन्नटदार ऊन का बना लगता है। इन मृण्मूर्तियों के विविध शिरोभूषा तथा अंग-प्रत्यंगों की बनावट से ऐसा लगता है। कि इनका संबंध 'मातृदेवी-संप्रदाय' से रहा होगा, क्योंकि प्राचीन काल में मातृदेवी की पूजा का प्रचलन मध्य पूर्वी देशों में प्रचलित था। कुछ नारी आकृतियाँ 'बच्चे को गोद लिए' अथवा 'स्तनपान' करते प्रदर्शित हैं।

मातृदेवी की पूजा का प्रचलन युगों-युगों तक चलते रहने का एक कारण यह भी रहा कि यह एक ऐसी देवी थी, जिसकी ओर आसानी से व्यक्ति का ध्यान आकर्षित हो जाता है। मातृदेवी की पूजा का आरंभ धरती माता की पूजा से ही संभवतः हुआ होगा। ऐसा अनुमान है कि ये मृण्मूर्तियाँ संभवतः प्रजनन एवं उर्वरता के अनुष्ठान से संबंधित 'मातृदेवी' की आकर्षक कृतियाँ हैं। मिश्र और मेसोपोटासमिया की संस्कृति में भी 'मातृशक्ति की उपासना' लोकप्रिय थी।

पशु मूर्तियाँ

सौंदर्य एवं तकनीक की दृष्टि से सैंधव सभ्यता की कला का भारतीय कला क्षेत्र में महत्वपूर्ण स्थान है। मानव मृण्मूतियों की तरह 'हड़प्पा संस्कृति' में मिट्टी से बनी पशु-पक्षी की आकृतियाँ भी अत्यंत कलात्मक एवं आकर्षक जान पड़ती हैं। ऐसा अनुमान है कि सैंधव सभ्यता के पुरास्थलों से प्राप्त मूर्तियों में लगभग तीन चौथाई 'मृण्मूर्तियाँ पशुओं' की हैं। सर्वाधिक संख्या में पशु मूर्तियों की प्राप्ति का मूल कारण यह था कि सिंधु-सभ्यता निवासियों के दैनिक जीवन में पशु-पक्षियों का महत्वपूर्ण उपयोग रहा।

सिंधु नदी के किनारे की भूमि उर्वर होने के कारण सैंधववासी व्यापक पैमाने पर कृषि कार्य करते थे, इसके लिए पशु ही सहायक रहा होगा। पशुओं में बैल, भैंसा, भेड़ा, बकरा, कुत्ता, हाथी, बाघ, गैंड़ा, भालू, सूअर, खरगोश, बंदर आदि की मूर्तियाँ मिली हैं। ये मूर्तियाँ अधिकांशतः चिकनी मिट्टी से बनी हैं। लेकिन मिट्टी से बने पशु मूर्तियाँ अधिकतर कम पकाये गये हैं। इनके ऊपर हल्के रूप में लाल पालिश का लेप किया गया है। कुछ उदाहरणों में हल्के पीले रंग का प्रयोग हुआ है। यह भी कहा जा सकता है कि इन पशुओं की सजावट में नाना प्रकार के रंग प्रयोग में लाये जाते थे। इन पशु आकृतियों में सबसे अधिक बैल की है। पुरातत्वविदो ने पहले इस संस्कृति के क्षेत्र में गाय तथा घोड़ें की अभाव माना था लेकिन डा. एस.आर. राव महोदय ने लोथल एवं रंगपुर के उत्खननों में इन दोनों पशु आकृतियों के मिलने का पुरातात्विक साक्ष्य प्रस्तुत कर दिया है। कुछ पशु मूतियाँ सेलखड़ी, सीप, हड्डी से बनी मिली हैं किंतु इनकी संख्या नगण्य हैं।

सिंधु सभ्यता का सबसे प्रिय पशु बैल था। बैलों की मूर्तियों में छोटे सींग वाले, बिना सींगवाले बिना कूबड़ तथा कूबड़दार दोनों ही प्रकार के बैलों की मूर्तियाँ पाई गई हैं। बैलों की जैसी उत्तम आकृति मोहरों पर है वैसी ही मिट्टी की बनी मूर्तियों में भी देखने को मिलता है। इसमें पशु के अंदर छिपी हुई ताकत, तगड़ी गर्दन, मजबूत मांसपेशियाँ, लटकते हुए गलकंबल और त्यौरीदार आँखें दर्शाई गई हैं।

मोहनजोदड़ो से प्राप्त वृषभ की बलिष्ठ मूर्ति विशेष रूप से दर्शनीय है। डीलवाले बैल की अपेक्षा बिना डीलवाले बैल की मृण्मूर्तियाँ अधिक संख्या में मिली हैं। चान्हुदड़ो की खुदाई से भी मिट्टी के बने अनेक बैलों की मूर्तियाँ मिली हैं। यहाँ से प्राप्त एक बैल के सींग के सिरे पर छिद्र बना है। संभवतः इसमें मुँदरी जैसी कोई वस्तु पहनाया जाता रहा हो। कालीबंगा से प्राप्त मूर्ति में बैल की आकृति को कलात्मक ढंग से आक्रामक मुद्रा में दिखाया गया है।

सैंधव सभ्यता के पुरास्थलों से प्राप्त मिट्टी के बने हुए अन्य पशु आकृतियों में हाथी, गैंड़ा, कुत्ता, सूअर, बंदर बकरा, भेड़, आदि हैं। हाथी की मूर्तियाँ बहुत ही कम मिली हैं। अधिकतर इसका चित्रण मुद्राओं

पर ही किया गया है। चान्हुदड़ो से एक मिट्टी के हाथी की आकृति प्राप्त हुई है जिसके पीठ के अलंकरण से यह ज्ञात होता है कि यह किसी विशेष अवसर के लिए सजाया गया था। गैंडा की अनेक मूर्तियाँ मिली हैं। लोथल से गैंडे का एक सिर मिला है। बंदरों की मूर्तियों में अधिक स्वाभाविकता का दर्शन होता है। एक आकृति में घुटने पर अपने हाथ को रखे हुए बंदर को प्राकृतिक मुद्रा में दिखाया गया है। इन पशु मूर्तियों में चिकनी मिट्टी की बनी गिलहरियाँ भी दर्शनीय हैं। ये पूँछ ऊपर किये प्राय: पिछले पैरों पर बैठी-खड़ी हैं। इनके पैरों के बीच में कोई खाद्य वस्तु है, जिसको कि वे हाथ से चुनकर खाती हुई प्रदर्शित है।

पकाई हुई मिट्टी के बने हुए खिलौने मोहनजोदड़ो, हड़प्पा, चान्हुदड़ो एवं अन्य सैंधव पुरास्थलों से प्राप्त हुए हैं, जिनके विभिन्न रूप कलाकारों के हाथ की कुशलता एवं कल्पना शक्ति का स्पष्ट परिचय मिलता है। पक्षियों में मोर, तोता, कबूतर, बत्तख, गौरैया, मुर्गा, चील, उल्लू आदि की मूर्तियाँ प्राप्त हुई हैं। पक्षियों के स्वाभाविक रंगों के अनुरूप उपयुक्त रंगों से रंगने के भी साक्ष्य मिले हैं। ठोस पहियों वाली खिलौना-गाड़ियाँ, इक्के तथा सीटियाँ भी बनाई जाती थी। पाकिस्तान के चोलिस्तान तथा भारत के हरियाणा के हिसार जिले में स्थित बणावली से खेत की जुताई में प्रयुक्त होनेवाले हल के मिट्टी के खिलौने मिले हैं।

मुहरें एवं मुद्राएँ

सैंधव कला की रूपायित कला के क्षेत्र में मुहरों का महत्वपूर्ण स्थान है। सिंधु सभ्यता की कला का सर्वोत्तम स्वरूप मोहनजोदड़ो, हड़प्पा एवं चान्हुदड़ो से प्राप्त मुहरों (ताबीज) और मुद्राओं पर अंकित आकर्षक दृश्यों से स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है। सैंधव मुहरों पर विकसित मूर्तिकला के दर्शन होते हैं। मुहरों का आकार मुख्यत: चौकोर या आयताकार है। इन मुद्राओं का औसतन आकार 0.7 गुणा 1.2.5 इंच है। ये मुद्राएँ अधिकतर साबुन पत्थर एवं चीनी मिट्टी से बनी है।

जिन मुद्राओं पर 'पशु और लेख' अंकित हैं वे तो मुद्रा और ताबीज या मुहर दोनों का काम देती हैं, किंतु जिन पर केवल पशु की आकृति है वह संभवत: केवल मुहर या ताबीज के रूप में प्रयुक्त होती थी। इन मुहरों एवं मुद्राओं को अधिक चमकीला बनाने के लिए इस पर पुन: किसी वस्तु विशेष का प्रयोग किया जाता था। इन मुहरों पर अत्यंत तीक्ष्ण एवं सूक्ष्म उपकरणों से बृषभ, हाथी, गैंडा, बाघ आदि की मूर्तियों, पत्तियों, टहनियों आदि का बारीकी से निर्माण किया गया है। यह कार्य सहज स्वाभाविक रूप से नहीं अपितु उल्टे रूपायन द्वारा पूरा किया गया है जिससे मुद्रित करते समय मुहर वस्तु पर सीधी उभरे।

प्रारंभ में विद्वानों में मतैक्य नहीं था कि सैंधव संस्कृति में मुहरों का प्रयोग 'मुद्रा के रूप में होता था या ताबीज या मुहर' के लिए। परंतु लोथल एवं कालीबंगा के उत्खननों से यह स्पष्ट हो गया कि ये मुद्राएँ ही थी जिनके छापे वस्तुएँ, पासर्ल आदि को बंद करने के लिए प्रयुक्त की जाती थी। मुहरें प्राय: सिंधु सभ्यता के नगरों और कस्वों के टीलों से ही अभी तक मिली हैं। इनकी संख्या अब तक 2000 से अधिक पहुँच गई है। इनमें से लगभग 1200 से अधिक मोहनजोदड़ो से प्राप्त हुई हैं। सिंधु घाटी की सभ्यता में ये मुहरें कई पदार्थों से बनाई जाती थीं। मुहरें अधिकांशत: सेलखड़ी की बनी हैं। कॉचली मिट्टी, गोमेद, चर्ट तथा मिट्टी की बनी हुई मुहरें भी मिली हैं। लोथल तथा देशलपुर से ताँबें की बनी मुहरें मिली हैं।

सैंधव सभ्यता की मुहरें अत्यंत छोटे आकार 20-30 मि.मी. की है। अधिकांश मुहरों के अग्रभाग पर किसी पशु का अंकन तथा प्रत्येक पर मुद्रा-लेख मिलता है तथा पृष्ठभाग में एक छेददार एक घुंडी बनी है जो मुहर को लटकाने के लिए प्रयुक्त होती थी। इन मुहरों का उपयोग अनुबंधों से संबंधित दस्तावेजों, पत्रों तथा व्यापारिक वस्तुओं की गाँठों पर छाप लगाने के लिए होता रहा होगा। मोहनजोदड़ो, कालीबंगा तथा लोथल से प्राप्त मुद्रांकों पर एक ओर सैंधव-लिपि से युक्त मुहर की छाप है तथा दूसरी ओर भेजे जानेवाले माल का चिन्ह अंकित है। इन मुहरों पर अंकित कुछ विशिष्ट दृश्यों का अंकन कला की दृष्टि से महत्वपूर्ण माना जाता है। मुहरों पर जो अनेक पशु-आकृतियाँ खड़ी हुई हैं उनमें से सभी पूजापरक नहीं हैं। हाथी, गैंडा, एकश्रृंगी पशु तथा भैंसा के आगे कभी-कभी नाँद की तरह की आकृति बनी मिलती है। लेकिन डीलदार बैल के आगे किसी भी

मुहर में अभी तक नाँद की आकृति बनी नहीं मिली है। इस बात की संभावना से इंकार नहीं किया जा सकता है कि इनमें से कतिपय का निर्माण उनके स्वामियों की इच्छानुसार किया गया होगा।

संश्लिष्ट-पशु

इन मुहरों पर अंकित कुछ विशिष्ट चित्रों का उल्लेख किया जा सकता है। इन मुहरों में से एक मुहर पर 'तीन सिरोंवाले पशु' का अंकन है जिसका एक सिर हिरण का, मुख्य शरीर तथा एक सिर एक श्रृंगी पशु का और तीसरा सिर मेढ़ा का है। इसे 'संश्लिष्ट-पशु' कहा गया है। एक मुहर पर एक व्यक्ति को दो बाघों से लड़ते हुए दिखाया गया है। एक अन्य मुहर पर व्याघ्रवत् पशु से लड़ते हुए एक पशु-मानव का दृश्य अंकित है। जिसका चेहरा मनुष्य का है परंतु उसके खुर, सींग और पूँछ है। सिंधु सभ्यता की एक मुहर पर गलकंबलयुक्त डीलदार बृषभ का अंकन है जिस पर एक छोटा सा मुद्रा-लेख अंकित है। वृषभ पौरुष का प्रतीक है।

इसके अतिरिक्त अनेक मुहरों पर एक श्रृंगी पशु का अंकन मिलता है। मैके महोदय को मोहनजोदड़ो से एक ऐसी मुहर मिली है जिसमें संभवतः 'भगवान त्रिनयन-शिव' का चित्रण है। इस मुहर में एक त्रिमुखी पुरूष को एक चौकी पर पद्मासन मुद्रा में बैठा दिखलाया गया है। उसके सिर में सींग हैं तथा कलाई से कंधे तक उसकी दोनों भुजाएँ चूड़ियों से भरी हुई हैं। उसके दाहिनी तरफ एक हाथी और एक हिरण एवं एक बाघ और बांई ओर एक गैंड़ा एवं एक भैंसा खड़ा दिखाया गया है। चौकी के नीचे दो हिरण खड़े हुए हैं। जिनमें से एक की आकृति खंडित है। पशुओं के बीच संभवतः यह पशुपति रूप का प्रदर्शन किया गया है। सींगों का सिर पर अंकन संभवतः 'त्रिशूल' का पूर्वरूप है। प्राचीन काल में सींगों का विशेष धार्मिक महत्व प्रतीत होता है। इस मुद्रा पर अंकित दृश्य की प्रशंसा करते हुए स्टुअर्ट पिग्गट महोदय ने इसे 'पशुपति शिव' कहा है। डा. वासुदेव शरण अग्रवाल महोदय ने भी यह स्वीकार किया है कि 'योगी तथा पशुपति' के रूप में ''रूद्र-शिव'' कई मुद्राओं पर अंकित है।

एक श्रृंगी-पशु का अंकन भी अनेक मुहरों पर मिलता है जो सैंधव कला का उत्कृष्ट उदाहरण प्रस्तुत करता है। डा. अग्रवाल महोदय का मत है कि एक श्रृंगी का सार्थक नाम ''श्रृंगवृष'' ज्ञात होता है। यह रूद्र-शिव का पवित्र पशु था। एक अन्य मुहर पर नर-नारियों की कुल मिलाकर सात आकृतियाँ अंकित हैं। मोहनजोदड़ो और लोथल से नाव की आकृतिवाली एक-एक मुहर मिली हैं। एक मुहर में पीपल की एक शाखा से एक श्रृंगी दो पशुओं को निकलते हुए दिखाया गया है।

ताम्र-पट्टिकाएँ

मुहरों के अतिरिक्त मोहनजोदड़ो एवं हड़प्पा के उत्खनन से कई ताम्र-पट्टिकाएँ प्राप्त हुई हैं जिन पर एक तरफ मुद्रा-लेख उत्कीर्ण है तथा दूसरी तरफ सैंधव मुहरों पर मिलनेवाले चिन्ह बने हुए हैं। कुछ बाद की पट्टिकाओं पर मछली, मगर तथा अन्य पर बकरी एवं हिरन का चित्र बना मिलता है।

मनके

सेलखड़ी, रेखांकित करकेतन, गोमेद, कांचली मिट्टी, शंख, हाथी-दाँत, मिट्टी, चाँदी एवं ताँबे पर निर्मित ढोलाकार, अण्डाकार, वृत्ताकार, सखंड मनके मिले हैं। मनके कलात्मक दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं। हड़प्पा, मोहनजोदड़ो, कालीबंगा, लोथल, तथा चान्हुदड़ो आदि सैंधव पुरास्थलों से अधिक संख्या में मनके मिले हैं। चान्हुदड़ो तथा लोथल से मनके बनानेवाले शिल्पियों की कार्यशालायें अथवा उद्योगशालायें प्राप्त हुई हैं। इन स्थानों से जो मनके मिले हैं उनमें से कुछ पूर्ण निर्मित हैं, कुछ अर्द्ध-निर्मित हैं तथा कुछ निर्माण की विभिन्न अवस्थाओं में हैं।

मृद्‌भांड

सैंधव सभ्यता की कला के सर्वोत्तम स्वरूप को जानने के लिए मिट्टी के वर्तनों पर शिल्पांकित विभिन्न प्रकार के चित्रों एवं ज्यामितीय-रेखाओं का अध्ययन आवश्यक है।

सिंधु घाटी की सभ्यता में अन्य पुरावशेषों के साथ-साथ मिट्टी के छोटे और बड़े आकार के वर्तन तथा उनके हजारों टुकड़े भी मिले हैं जिनसे उन मिट्टी के पात्रों की आकृति और आकार का पता चलता है।

मृद्भांडों के निर्माण हेतु मिट्टी में कभी बालू कभी चूना तथा कभी-कभी दोनों का मिश्रण किया जाता था। सैंधव सभ्यता के मृद्भांडों की यह विशेषता है कि उत्कृष्ट 'कलात्मक चित्रों के साथ-साथ ये उपादेयता' की दृष्टि से अधिक महत्वपूर्ण माने जाते हैं। इन बर्तनों में अनाज रखने के लिए बड़े-बड़े कुठिला, पानी के लिए बड़े-बड़े मटके, सुराही, मर्तबान, कुल्हण, कटोरे, प्याले, तश्तरियाँ, बीकर, थालियाँ और नाँद आदि प्रमुख हैं। आधे-आधे इंच के छोटे-छोटे बर्तन भी मिले हैं जिनमें शायद इत्र रखा जाता रहा होगा। बड़े बर्तनों के लिए ढक्कन भी बनाये जाते थे। छोटे बर्तन चाक पर और बड़े बर्तन हाथ से बनाये जाते थे। कुंभकारों के द्वारा पकाने में कभी-कभी बर्तन तेज अथवा हल्का लाल एवं कभी नीला हो जाता था। इन नीले रंग के मृद्भांड़ों पर 'काला पालिश' की जाती थी।

सिंधु सभ्यता के मिट्टी के बर्तन मुख्यतः लाल अथवा गुलाबी रंग के हैं जिनके ऊपर लाल रंग का चमकदार लेप (पालिश)किया गया था। मोहनजोदड़ो के निचले स्तरों से प्राप्त कतिपय पात्र अपने चमकीलेपन के कारण अत्यन्त कलात्मक लगते हैं। चान्हुदड़ो से प्राप्त मिट्टी के बर्तनों पर कूचियों द्वारा रंगे हुए कलात्मक चित्र अत्यंत रमणीय एवं आकर्षक हैं। चित्रित एवं सादे दोनों प्रकार के पात्र प्राप्त होते हैं। अलंकरण अभिप्राय प्रायः काले रंग से सँजोये हुए प्राप्त होते हैं, यदा-कदा सफेद एवं हरे रंगों का भी प्रयोग किया गया है। त्रिभुज, वृत्त, वर्ग आदि ज्यामितीय आकृतियों, पीपल की पत्ती, खजूर, ताड़, केला आदि वनस्पतियों, वृषभ, हिरण, बारहसिंघा आदि पशुओं, मोर, सारस, बत्तख आदि पक्षियों तथा मछली का चित्रण विशेष लोकप्रिय था।

हड़प्पा से प्राप्त कुछ बर्तनों पर 'उड़ते हुए कबूतर' का अंकन अत्यंत आकर्षक है जिनके मध्य तारे बने हैं तथा उनके पीठ पर 'काल्पनिक अर्द्ध-मानव एवं पशु' आकृतियाँ अंकित हैं। उत्कीर्ण-अलंकरण कम संख्या में मिले हैं। प्रमुख पात्र प्रकारों में साधार तश्तरियाँ, बेलनाकार बहुल छिद्रित पात्र, नुकीले आकारवाले चषक (कुल्हण), जामदानी, लंबे आकार के मर्तबान, साधारण थालियाँ, हत्थेदार प्याले, कलश, घड़े, मटके, नाँद, तसला, घुंडीदार ढक्कन आदि हैं। जामदानी, नुकीले आधारवाले चषक और छिद्रित-पात्र सैंधव सभ्यता के विशिष्ट मृद्भांड हैं।

अन्य कलात्मक वस्तुएँ

कला की दृष्टि से सिन्धु घाटी के लोगों ने छोटी-छोटी कलाकृतियों का भी निर्माण किया था। आभूषण, अलंकरण, प्रसाधन एवं गृहोपयोगी वस्तुओं का इस संदर्भ में उल्लेख किया जा सकता है। आभूषणों का एक विशाल निधान हड़प्पा में एवं चार मोहनजोदड़ो में मिले हैं। हड़प्पावाला निधान पृथ्वी में गड़ा मिला था जिसमें भुजबंध तथा सोने और मनकों के हारों के लगभग 500 टुकड़े थे। ऐसा लगता है कि सैंधव सभ्यता में चाँदी और सोने की बहुलता थी। सोने, चाँदी के हार, कंगन, अँगूठी आदि आभूषण कला की दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं। चूड़ियाँ, नूपुर, आदि आभूषण भी मिले हैं। जिनमें कलाकारों ने अपनी कलात्मक अभिरूचि का परिचय दिया है। केश-विन्यास में काम आनेवाली पिनें और कंघियाँ भी मिली हैं। प्रस्तर एवं ताँबें तथा कांस्य धातु के बने हुए गृहोपयोगी उपकरण भी मिले हैं।

भारतीय सभ्यता और संस्कृति के कतिपय तत्वों का उद्गम सिन्धुघाटी सभ्यता से माना जाता है। इस दृष्टि से भारतीय कला को सिंधु घाटी सभ्यता की कई देन है, जैसे मातृदेवी की उपासना, शिव-पशुपति जैसे देवता की धारणा, लिंग-पूजा, स्वस्तिक, चक्र आदि मांगलिक चिन्ह, मुहरों पर अंकित वृषभ से प्रेरित अशोक का रामपुरवा स्तम्भ शीर्ष आदि। सौंदर्य एवं तकनीक की दृष्टि से सिंधु सभ्यता की कला का भारतीय कला के इतिहास में महत्वपूर्ण स्थान है।